International Research Journal of Human Resource and Social Sciences
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
Impact Factor 7.924 Volume 11, Issue 08, Aug 2024
Website- www.aarf.asia, Email : editoraarf@gmail.com

शास्त्र मे त्रैगुण्यविचार

धर्मेन्द्रसिंह झाला, पीएच.डी. अनुसंधानकर्ता, लकुलीश योगा विश्वविद्यालय, अहमदाबाद (गुजरात)
डॉ. योगेश भट्ट, प्रोफ़ेसर एवं अनुसंधान मार्गदर्शक, लकुलीश योगा विश्वविद्यालय, अहमदाबाद (गुजरात)

त्वां सूरिभिः तत्त्वबुभुत्सयाद्धा सदाभिवादार्हणपादपीठम् ।।
ऐश्वर्यवैराग्ययशोऽवबोधवीर्यश्रिया पूर्तमहं प्रपद्ये ।।
(भाग. पुरा. ३।२४।३२)

दर्शन

'दर्शन' शब्द संस्कृतमें पाणिनीके अनुसार **"दृश्'** 'देखना'से बना हुआ है. श्रीराधाकृष्णन् अपने Indian Philosophy नामक ग्रन्थमें कहतें हैं :

This seeing may be either perceptual observation or conceptual knowledge or intuitional experience. It may be inspection of facts, logical inquiry or insight of soul. Generally, 'darsans' mean critical expositions, logical surveys, or systems. (राधाकृष्णनन्, २००८,२०).

मूलमें 'दर्शन' माने 'देखनेकी दृष्टि' भारतमें **"ऋषयो मन्त्र दृष्टारः"** जो मन्त्रदृष्टय होते हैं वे ऋषि कहेजाते हैं. भारतीय परंपरामें सभी दर्शनोंके प्रणेता ऋषि ही माने गये हैं. उनकेद्वारा प्रवर्तित जड़ - चेतन सृष्टि, सृष्टिकर्ता, जीव, ईश्वर, जीवेश्वरसम्बन्ध, से सम्बन्धित विभिन्न विचारोंकी एकसूत्रता सिद्धान्तव्यवस्थाको 'दर्शन' कहा जाता है.

भारतीयपरंपरामें दर्शन

भारतीय परंपरानुसार अनेक ऋषिमुनिओंने एक ही सत्यका विविध दृष्टिकोणसे और विभिन्न गहेराईयोंसे दर्शन करके वर्णन किया है और विविध दर्शनपरंपरा स्थापित की है.

भारतीयप्रज्ञाके सभी दर्शनोंमें अपनेसे इतर दर्शनोंको या उनके निरूपक ग्रन्थोंको भी 'शैतान' द्वारा प्रेरित नरकाग्निके इन्धनके रूपमें नहीं जाना जाता, न तो 'काफिरोंके ग्रन्थ" कहेके अपने स्नानगृहके होजका पाणी गर्म करनेके लिये जला देनेसे अपने धर्मकी महान सेवा माना जातां. प्रत्युत उनको भी पूर्वपक्ष कहकर विद्याका सन्मान दिया जाता है. इसलिये वेदको गालीप्रदान करनेवाले "त्रयो वेदस्य कर्तारो भण्डधूर्तनिशाचराः" कहेनेवाले चार्वाकादी मतोंको भी दर्शनरूपमें स्थान प्राप्त होता है. सर्वदर्शनसंग्रहकार सायणमाधव चावार्कमतको अध्ययनक्रममें प्रथमदर्शनतया स्थानापन्न करतें हैं.

© Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

अमान्य या अपने मतानुसार खण्डनयोग्य मतको भी विद्याके अनिवार्य अंग पूर्वपक्षके रूपमें सन्मान देना यह भारतीय प्रज्ञाचित्रको अनूठा = विविध आकृतियों और भिन्नभिन्नरंगश्रेणी युक्त बना देता है. भारतीयप्रज्ञा विभिन्न दृष्टिमें विलसनेवाले एक तत्त्वको निहारनेवाली दृष्टि है जैसेकि अभियुक्तोक्ति हैः "यं शैवा समुपासते शिवइति ब्रहमेति वेदान्तिनो बौद्धा बुद्ध इति प्रमाणपटवः कर्तेति नैयायिकाः अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्मेति मीमांसकाः सोऽव्याद् वः खलु वांछितार्थफलदो त्रैलोक्यनाथो हरिः".

आदिकालसे भारतवर्षके महान ऋषिओंने अपना समग्र जीवन प्राकृतिकतत्त्वों तथा मानवअस्तित्वके रहस्योंके अध्ययनके लिये अर्पण किया है. उन्होंने तत्त्वविद्या प्राप्त की है... अन्तमें उनको सृष्टिके मूलभूततत्वो और मानवजीवनके अस्तित्वका रहस्य उसका मूलस्रोत और सृष्टिकी अद्भूतताके रहस्य प्राप्त हुए. तत्पश्चात् उन्होंने ये तत्त्वविद्याको एक मुक्ति तक पहुंचानेवाले आन्तरपथके रूपमें मानवके कल्याणार्थ प्रकाशित की... ऋषिओंसे प्राप्त हुयी यह अमूल्य उपहाररूपी तत्त्वविद्या प्राचीनकालसे गुरु-शिष्य-परंपराके द्वारा समग्र मानवके कल्याणार्थ हस्तांतरित होती हुई आज भी विद्यमान है. (राजर्षि, २०१६,१)

श्रीसायणमाधवद्वारा प्रणीत सर्वदर्शनसंग्रहोक्त दर्शन:

१. चार्वाकदर्शन. २. बौद्धदर्शन ३. जैनदर्शन ४. रामानुजदर्शन ५. पूर्णप्रज्ञदर्शन ६. नकुलीशपाशुपतदर्शन ७. शैवदर्शन ८. प्रत्यभिज्ञादर्शन ९. रसेम्वरदर्शन १०. वैशेषिकदर्शन ११. नैयायिकदर्शन १२. जैमिनिदर्शन. १३. पाणिनीदर्शन १४. सांख्यदर्शन १५. योगदर्शन १६. शांकरदर्शन.

इस विभाजनके अनुरूप ही इन दर्शनोंके अलावा स्वयं वेदोक्त इतर प्राचीन दर्शन और शंकरोत्तरदर्शनो को भी लेना चाहिये. भारतीयप्रज्ञाका अन्यएक वैलक्षण्य है कि यहां कभी भी मात्र तत्त्वदर्शनको ही दर्शित नहीं किया गया है पर हर तत्त्वदर्शनके साथ जूड़ी कोई न कोई साधनाप्रणालीकी परंपरा भी भारतवर्षमें उपदिष्ट हुयी है उदाहरणतया इस पेपरका विषय सांख्य और योग दर्शन

सांख्यदर्शन

महर्षि कपिल सांख्यदर्शनके प्रवर्तक हैं. भगवान् गीतामें कहते हैं "सिद्धानां कपिलो मुनिः" (भग. गीता १०।२६). भागवतके तृतीयस्कन्धमें कपिलदेवद्वारा सांख्यशास्त्रके तत्त्व और प्रक्रियाका निरूपण करते कहते हैं: "एतद् मे जन्म लोके अस्मिन् मुमुक्षुणां दुराशयात् प्रसंख्यानाय तत्त्वार्ना सम्मताय आत्मदर्शने" सुबोधिनी टीकामें श्रीवल्लभाचार्य कहते है “आशयः संघातात्मा सः चेद् दुष्टः तदा आत्मानं नाशयति अतः एवंभावाद् उत्क्रमिष्यतः प्राणिनः उद्धारार्थं तत्त्वानां संख्यानं कर्तव्यम्... उद्देश-लक्षणाभ्याम्” (भाग. सुबो. ३।२४।३६). संघातरूपी आशय ही यदि दुष्ट हो तो वह आत्मविनाशक हो जाता है... उद्धारकी इच्छायुक्त प्राणिओंके लिये उद्देश-लक्षणद्वारा प्रसंख्यान कर रहा हुं."

सांख्यशास्त्रके अनुसार मूल तत्व दो हैं १. पुरुष और २. प्रकृति. शब्दव्युत्पत्तिके अनुसार "पुरी शेते इति पुरुषः" और "प्रकर्षेण करोति उत्पादयति इति प्रकृति, प्रकृष्टा कृति इति वा" देहादिनियामक चेतनात्मक ज्ञानशक्तिमान तत्त्वको पुरुष और क्रियाशक्तिमान जगदुत्पादक तत्त्वको प्रकृति कहा जाता है.. कपिलदेवजी माता देवहुतीको उनका रहस्य समझाते हैं: **१** "अनादिर् आत्मा पुरुषो निर्गुणः प्रकृतेः परः प्रत्यग्धामा स्वयंज्योतिर् विश्वं येन समन्वितम् **२** : "यत् तत् त्रिगुणम् अव्यक्तं नित्यं

सदसदात्मकम् प्रधानं प्रकृतिं प्राहुः अविशेषं विशेषवत्" (भाग. पुरा. ३।२६।३,१०) १ पुरुष अनादि आत्मा गुणोंसे रहित होनेके कारण प्रकृतिसे पर होता है. वह स्वयंज्योति प्रत्येकके भीतर ही इस प्रकार प्रकाशित होता है कि समग्र विश्व उससे समन्वित हो जाता है. २: त्रिगुणात्मक प्रकृति जो नित्य अव्यक्त सदसदात्मक है जो कि अविशेष और विशेषवान् भी है उसे प्रधान कहा जाता है. सृष्टिके उपादानरूप जड़ अव्यक्त तिनोगुणोंकी साम्यावस्थारूप प्रकृतिमें जब पुरुषरूप चेतनाका आधान होता है तब अग्नि-अयोगोलकन्यायसे या पंग्वन्धन्यायसे सचेतन् जगदंकुर महत् उत्पन्न होता है उससे अहंकार और अहंकारसे मन इन्द्रिय और भूत उत्पन्न होते हैं. मनसे बुद्धितत्त्व प्रकट होता है.

Fundamental constituent of the Creation:

* Material Active Prakrati 2. Conscious cognitive purusha.

The process of Creation:

Pure sensitivity –> Pensation (witness) –> self awareness –> awareness of others.

पुरुष चेतना / (प्रकृति)---> चित्त (साक्षी) अहंकार-----> इन्द्रिय+मन+बुद्धि

चतुर्ग्रन्थी अन्तःकरण

कपिलदेवजीके अनुसार जैसे बाह्य क्रियाको सम्पन्न करनेवाली कर्मेन्द्रिय और बाह्य पदार्थका ज्ञान करानेवाली ज्ञानेन्द्रिय होती हैं, वे भीतरी अन्तःकरणके कारण कार्यशील हो पाती हैं. अन्तःकरणके चार पहेलु होते हैं.

* मन : संकल्प-विकल्पात्मक और कामजनक है तथा इन्द्रियोंका अधीश्वर इन्द्रियकानियामक मन होता है.
* बुद्धिः बाह्य द्रव्यका स्फुरण और विज्ञान बुद्धिसे होता है और इन्द्रियकार्योंकी अनुग्राहक (निर्णायक) है.
* अहंकार : सारे देहादिसंघातको एकसूत्रमें बांधनेवाला होता है. अपनी आत्मा भी हमको 'अहं' के रूपमें ही अनुभूत होती है.
* चित्तः चेतनासे सबसे निकट अन्तर्तम होता है. सारे देह इन्द्रिय मन बुद्धि का नियामक, सारी साधनाका मूल विषय. इसलिये कहा गया है. **"योगः चित्तवृत्तिनिरोधः"**

इन्द्रियव्यापारमें अन्तःकरणका रोल्

१) मनः इन्द्रिय जड़वत् होनेके कारण सारे विषयोंका एकसमान ग्रहण करती है परन्तु मन जब इन्द्रियके साथ जुड़ता है तब समनस्क इन्द्रिय ही सुचारु रूपमें अपने विषयों केन्द्रित हो पाती है. जैसे उपनिषद्में कहा है **"अन्यत्र मना अश्रृण्वन्"** मन त्रिक्षणावस्थापन्न होनेके कारण सभी इन्द्रियोंके सभी विषयोको ग्रहणकरने समर्थ बनता है. मनके संकल्पसे ही कर्मेन्द्रिय अपने कार्यको सम्यक्तया सम्पन्न कर पाती है. मनके कारणही ज्ञानेन्द्रियको पदार्थज्ञानार्थ विकल्प मिल पाते है.

२) बुद्धि : बुद्धिके कारण ही पहले सामान्य "कुछ है" ऐसा और अन्तमें "यह है" यह विज्ञान होता है. इन्द्रियकी क्रिया या ज्ञान का निर्णय तो बुद्धि ही करती है, बुद्धिके तारतम्यसे ज्ञान और क्रिया में तारतम्य आता है. बुद्धिकी पांच वृत्ति मानी गई हैं . “संशयो अथ विपर्यासो निश्चयः स्मृतिरेव च

स्वापः इति उच्यते बुद्धेः लक्षणं वृत्तितः पृथक् १. संशय २. विपर्यास (भ्रम) ३. निश्चय ४. स्मृति और ५. निद्रा या स्वप्न."

३) अहंकार : अहंकार अपनी self-awareness है. अहंकार मीमांसामें गो. श्याममनोहरजीने समझाया है "स्वयंप्रकाश जीव चेतना (consciousness) कर्ता नहीं होती. वह तो अहंकारका सहारा ले कर ही कर्ता बनती है. चेतना और सेल्फ्-अवेयरनेस् दो अलग बस्तुएं हैं. चेतनाको सेल्फ्-अवेयरनेस्के साथ जोड़ा गया है क्योंकि चेतना महत्में डाली गयी है और महत्को स्वयंप्रकाश चेतना प्रकृतिसे विरासतमें मिली है. आप अपनी इस चेतनाको सेल्फ्-अवेयरनेस्के माध्यमसे ही देख सकते हैं. अन्यथा हम कभी भी उस चेतनाकी जानकारी प्राप्त ही नहीं कर सकते. स्वयंप्रकाश चेतना तो अपनी सेल्फ्-अवेयरनेस्के साथ मिश्रित हो चुकी है. अधिक-से-अधिक आप अपने बारेमें जान सकते हैं, अपनी चेतनाके बारेमें नहीं" (गो. श्याममनोहर. अहंकारमीमांसा. भाग. १ पृ.१५१)

४) चित्त: सभी अन्तःकरणमें प्रमुख है. चित्तमें जो बात चढ़ जातिं है हम उससे संचालित होते हैं. स्वतः चित्त जल जैसा निर्मल होता है परन्तु मन बुद्धि अहंकार की वृत्तियां उसे कश्मलयुक्त बना देती है.

स्वरूपात्मकत्रिगुण और कार्यरूप प्राकृतत्रिगुण

सांख्यसूत्रपर आधारित ईश्वरकृष्णकृत सांख्यकारिका ग्रन्थ है उसपर सांख्यतत्त्वकौमुदि टीका है. सर्वदर्शनसंग्रहकार कहते हैं : प्रधानं त्रिगुणात्मकं सत्त्वरजस्तमांसि त्रयो गुणाः, तेच तत्र साम्यावस्था... सत्त्वादिनां प्रकृतिस्वरूपत्वान प्रकृतिधर्मत्वाभावात्, तदुक्तं सांख्यप्रवचनसूत्रे "सत्त्वादीनाम् अतद्धर्मत्वं तद्रूपत्वात्" (सां.प्र.सू.६।३९) इति. प्रकृतेः गुणाः इति व्यवहारस्तु वनस्य वृक्षाः इतिवद् बोध्यः, "सत्त्वं रजः तमः इति गुणाः प्रकृति संभवाः" (भग. गीता १४|१५) इत्यत्र गुणपदेन न प्रकृतिस्वरूपभूतानां गुणानां ग्रहणं किन्तु तत्कार्यभूता." मूलप्रकृतिके तीनों गुण स्वरूपात्मक हैं माने तीनो गुणोका एकीकृतरूप अव्यक्तव्य जहां तीनों गुण परस्पर भिन्नतया अवस्थित होते हैं. प्रकृतिसे प्रकटे हुए सृष्टिके प्राकृत द्रव्योंमें वे कार्यभूत गुणतया अवस्थित होते हैं. कार्यभूत प्राकृत गुणको जो सर्वदा सत्त्व-रज-तमकी मिश्रावस्था है उनको समझाते हुये कहा गया है "सत्त्वं लघु प्रकाशकम् इदम् उपष्टम्भकं चलं च रजः गुरुवरणकमेव तमः... प्रीत्यप्रीतिविषादात्मकाः प्रकाशप्रवृत्तिनियमार्थाः अन्योन्याभिभवाश्रयजननमिथुनवृत्तयश्च गुणाः" (सांख्यका- रिका. १३). इति सत्त्वस्य लघुत्वादेव तत्कार्यभूतेषु इन्द्रियेषु विषयग्रहणीन्मुख्यरूपं पाटवं दृश्यते, तथा सत्त्वस्य प्रकाशकत्वादेव इन्द्रियाणां विषयप्रकाशकत्वं दृश्यते यतो. रजः चलं स्वभावतः सक्रियम्... तत्तत्कार्योत्पादे प्रवर्तकम्. तमएव गुरु तथा आवरकं चेष्टम्, सत्त्वस्य सुखप्रसादप्रकाशादयो धर्माः, रजसो दुःखकालुष्यप्रवृत्त्यादयः. तमसो मोहावरण-स्तम्भनादयः... अन्योन्याभिभव-आधारत्व-जनन-मिथुनरूपात्मकाः यथा वर्तितैले अग्निविरोधिनी सह अग्निनारूप प्रकाशकं कार्य कुरुतो यथा वात-पित्त-कफ." सत्त्वगुण सूक्ष्म और प्रकाशक होता है. रज प्रवृत्तिका कारण बनता है और तम स्थूल और आवरक होता है. सत्त्वके सुख-प्रसन्नता-एकाग्रता आदि धर्म होते हैं, रजके दुःख-क्लेश-चंचलता आदी धर्म होते हैं, तमके मोह-आवरण आदि गुण होते है. प्राकृत पदार्थोमं ये गुण अन्योन्यको अभिभूत, अन्योन्यके आधारभूत, अन्योन्यके प्रवर्तक और सर्वदा अन्योन्यसे जुड़े हुए रहते है.

भगवद्गीतामें सांख्य और त्रिगुण

कार्यकारणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरुच्यते। पुरुषः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते ॥

पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुक्तें प्रकृतिजान् गुणान्। कारणं गुणसंगो अस्य सदसद्द्योनिजन्मसु ।।
सत्त्वं रजस्तमः इति गुणाः प्रकृतिसंभवाः। निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनम् अव्ययम् ।।
तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात् प्रकाशकम् अनामयम्। सुखसंगेन बध्नाति ज्ञानसंगेन चानघ ।।
रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासंगसमुद्धभवम्। तन्निवघ्नाति कौन्तेय कर्मसंगेन देहिनम् ।।
तमस्तु अज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम्। प्रमादालस्यनिद्राभिः तन्निबध्नाति भारत ।।
सत्त्वं सुखे सञ्जयति रजः कर्मणि भारत। ज्ञानम् आवृत्यतु तमः प्रमादे सञ्जयत्युत ।।
रजस्तमश्चाभिभूय सत्त्वं भवति भारत। रजः सत्त्वं तमस्चन तमः सत्त्वं रजस्तथा ।।
सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन् प्रकाश उपजायते। ज्ञानं यदा तदा विद्याद् विवृद्धं सत्त्वम् इत्युत ।।
लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणाम् अशमः स्पृहा। रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभः ।।
अप्रकाशो अप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च। तमस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन !।।
सत्त्वात् संजायते ज्ञानम् रजसो लोभएव च।। प्रमादमोहौ तमसो भवतो अज्ञानमेव च ॥

(भग. गीता १३।२०-२३,१४/५-१७)

कार्यकी उत्पत्ति, उत्पादकरूप कारण और कर्तृत्व में प्रकृति कारण होती है और सुख-दुःखादिका भोक्ता पुरुष बनता है. प्रकृतिमें स्थित ही पुरुष प्रकृतिसे उत्पन्न त्रिगुणात्मक पदार्थोंको भोगता है और इन गुणोंका संग ही इस जीवात्माको अच्छी-बुरी योनियोंमें जन्म लेनेका कारण है... सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण ये प्रकृतिसे उत्पन्न तीनों गुण अविनाशी जीवात्माको शरीरमें बांधते हैं. सत्त्व रज और तम तीनों गुणोंमें सत्त्वगुण तो निर्मल होनेके कारण प्रकाश करनेवाला और विकाररहित है, वह सुखके सम्बन्धसे और ज्ञानके सम्बन्धसे अर्थात् अभिमानसे बांधता है. रागरूप रजोगुण कामना और आसक्ति से उत्पन्न होता है वह जीवात्माको कर्मोंक और उनके फलके अभिमानसे बांधता है. सभी देहाभिमानियोंको मोहित करनेवाले तमोगुणको तो अज्ञानसे उत्पन्न जान, वह जीवात्माको प्रमाद आलस्य और निद्राके द्वारा बांधता है, सत्त्वगुण सुखमें लगाता है और रजोगुण कर्ममें तथा तमोगुण तो ज्ञानको ढककर प्रमादमें भी लगाता है. रजोगुण और तमोगुण का अभिभव करके सत्त्वगुण वैसे ही अन्य दो गुणोंका अभिभव करके रजोगुण और तमोगुण बढ़ता है. सत्त्वगुण बढ़नेपर देह तथा अन्तःकरण और इन्द्रियों में चेतनता और विवेकशक्ति उत्पन्न होती है. रजोगुणकी वृद्धिसे लोभ, प्रवृत्ति, स्वार्थबुद्धिसे कर्मों का सकामभावसे आरम्भ, अशान्ति और विषयभोगोंकी लालसा ये सब उत्पन्न होते हैं, तमोगुणकी वृद्धिसे अन्तःकरण और इन्द्रियों में अप्रकाश, कर्तव्य कर्मो में अप्रवृत्ति और प्रमाद और मोह उत्पन्न होते हैं... सत्त्वगुणसे ज्ञान प्रकट होता है रजोगुणसे लोभ और तमोगुणसे प्रमाद, अज्ञान और मोह उत्पन्न होते हैं.

अर्जुनके प्रश्न "अथ केन प्रयुक्तो अयं पापं चरति पुरुषः अनिच्छन्नपि वाष्णेय बलादिव नियोजितः" (भग. गीता ३।३६) के उत्तरमें भगवान् कहतें हैं "काम एषः क्रोध एषः रजोगुणसमुद्भवः महाशनो महापाप्मा विद्धचेनम् इह वैरिणम्, धूमेन आव्रियते वह्निः यथादों मलेन च... आवृतं ज्ञानम् एतेन ज्ञानिनो नित्यवैरिणा कामरूपेण कौन्तेय दुष्पूरेण अनलेन च" (भग. गीता ३।३७-३९). रजोगुणसे उत्पन्न हुवा यह काम या क्रोध ही कभी न अघानेवाला पापपूर्ण है इसको ही तु वैरी जान. धुऐसे अग्नि और मैलसे दर्पण ढका रहता है वैसे कामसे ज्ञान ढका हुआ है.

श्रीवल्लभाचार्यजी भागवतसुबोधिनीमें समझाते हैं: "इन्द्रियाणि हि द्विविधानि स्वभावतः 'द्वया ह प्राजापत्या' (बृह. उप. १।३।१) इत्यत्र निरूपितानि. एकानि देवरूपाणि, एकानि आसुररूपाणि... तत्र बलिष्ठानि आसुराणि तैः दैवरूपाणि न स्वकार्ये प्रवर्तितुं शक्नुवन्ति, तानि चेद् आसन्योपासनादिना आसंगादिदोषाद् निवृतानि स्वस्य देवभावं प्राप्नुवन्ति तदा कार्यतोऽपि देवरूपाणि भवन्ति तत्र ऋषिणां बहुजन्माभ्यासाद् देवरूपाण्येव इन्द्रियानि भवन्ति, ये वा देव्यां सम्पदि जाताः तेषामपि देवरूपाणि भवन्ति आसुराण्यपि भवन्ति. एकस्मिन्नेव गोलके उभयमपि तिष्ठति. देवरूपाणाम् इन्द्रियाणाम् एतल्लक्षणम् तानि लयविक्षेपशून्यानि. ततो विक्षेपाभावाद् न कार्येषु प्रवृत्त्या स्पष्टम् उपलभ्यन्ते, नापि लयाभावाद् मूढानि पदार्थमपि न गृह्णन्ति इत्यपि, किन्तु रूपमात्रं चक्षुः गृह्णाति पश्यति इति कृत्या चक्षुः अस्ति इति ज्ञायते... मनोऽपि द्विविधम् दैवासुरविभेदेन तत्र आसुरं नानाभावापन्नं गुणैः च क्षोभम् एति. दैवन्तु एकस्वभावापन्नं मननात्मकमेव, इन्द्रियाणितु उभयविधान्येव भवन्तु नाम कार्यमेव आसुराणां बाध्यते. मनसातु द्वितीयेन न भाव्यमेव तथासति इन्द्रियाणां पूर्वोक्ता वृत्तिः न स्यात्." (सुबोधिनी. ३।२५।३२) इन्द्रियां स्वभावसे द्विविध होती हैं "इया ह वै प्राजापत्याः" इस श्रुतिवचनसे निरूपित किया है. कुछ देवरूप और कुछ आसुररूप होती हैं... दोनों प्रकारकी इन्द्रियोंमें आपसमें स्पर्धा होती है उनमें आसुरी इन्द्रियोंके बलिष्ठ होनेसे देवरूप इन्द्रियां स्वयंके कार्यमें प्रवृत्त नहीं हो सकती. आसुरी इन्द्रियां यदि आसन्योपासनाके द्वारा विषयासक्तिके दोषसे मुक्त हो जाय तो वे देवभावको प्राप्त कर सकती हैं. तब देवरूपोचित कार्य करनेमें समर्थ हो सकती हैं. ऋषिओंको तो बहुत जन्मोंका अभ्यास होनेके कारण इन्द्रियां देवरूप होती हैं; अथवा जो दैवी सम्पद्में जन्मे हो, उनकी देवरूप एवम् आसुररूप भी इन्द्रियां हो सकती हैं. एक ही इन्द्रियगोलकमें दोनों रहती हैं... दैवी इन्द्रियोंमें लय या विक्षेप की बाधा नहीं होती. विक्षेप न होनेके कारण कार्यकी प्रवृत्तिमें स्पष्ट रीतसे अनुभवमें नहीं आती. वैसे ही लय भी न होनेके कारण इतनी मूढ़ नहीं हो जाती कि पदार्थको गृहीत ही न कर पाती हों. फिरभी चक्षु रूपमात्रका ग्रहण करती है इसलिये 'चक्षु' है ऐसा जाना जाता है... मन भी दो प्रकारके होते हैं, दैवी और आसुरी के भेदसे. आसुरी मन नाना भावोंसे युक्त होता है और प्रकृतिके गुणोंसे क्षुब्ध भी, दैवी मन मननात्मक होता है. इन्द्रियोमें रही हुई आसुरी वृत्तियां कार्यान्वित होनेपर ही फलप्रद बनती हैं पर मन यदि आसुरीभावयुक्त हो तो सारा प्रारंभ ही दुष्ट हो जाता है."

यहां इन्द्रियनिग्रहका उपाय आसन्योपासना माने योगोपासना बताया है. ज्ञानीका ज्ञान भी कामादि दोषके आगे व्यवहारमें कार्यान्वित नहीं होता.

योगमें त्रिगुणका प्रभाव

योगको साधनोंके भेदसे १. राजयोग अर्थात् ध्यानयोग; २. सांख्ययोग या ज्ञानयोग ३. निष्कामकर्मयोग. ४. भक्तियोग ५. हठयोग आदि श्रेणियोंमें विभाजित किया गया है. योगके लिये कहा गया है: "परांचि खानि व्यतृणोत स्वयंभूः तस्मात् पराङ् पश्यति नान्तरात्मन् कश्चित् धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षद् आवृत्तचक्षुर् अमृतत्वम् इच्छन्" (कठोप. २।१।१) प्रजापतिने हमारे इन्द्रियोंके द्वार भीतरसे बहारकी और खुलते हुए बनाये हैं कोई धीरपुरुष इन्द्रियोंके द्वारको संयत करके अमृतत्वकी इच्छा रखके भीतर रहे हुए आत्माको देख पाता है.

योगमें भी त्रिगुणके प्रभावकी चर्चा है. चित्त अगाध समुद्र जैसा है वहां जैसे वायु आदिके वेगसे जलरूपी तरंगे उढ़ती है तेजसे जल तप्त होता है और पार्थिवपदार्थसे मैला भी इसी प्रकार चित्त इन्द्रियोंआदि द्वारा प्रभावित होता है. जैसे जल, वायुआदिके अभावमें तरंगादि परिणामोंका त्याग करके स्वभावमें अवस्थित हो जाता है. इस अवस्थाकों चित्तवृत्तिनिरोध कहा जाता है. चित्त सत्त्व ज्ञान स्वभाववाला है. रजो गुण और तमोगुणके कारण ऐश्वर्यादि और अज्ञानादि उत्पन्न होते हैं. "विवेकख्यातिर् अविप्लवा हानोपायः" (यो.सू.२।२६) जब सत्त्वात्मकबुद्धि और पुरुष की भिन्नताका बोध 'विवेकख्याति' है. "प्रसंख्यानेऽपि अकुसीदस्य सर्वथा विवेकख्यातेः धर्ममेधः समाधिः। (यो.सू.४।२९) विवेकख्यातिमें भी वितरागको 'धर्ममेधसमाधि' होती है. प्रकृतिके गुण उसे लिप्त नहीं कर सकते जिसको परम परसंख्यान भी कहते हैं. आगे संप्रज्ञात समाधि और अन्तमें निर्बीज-समाधिमें जीव स्वरूपस्थ होके मुक्ति प्राप्त करता है.

चित्तकी पांच अवस्था

1. **मूढावस्था :** यह तमोगुणकी प्रधानता युक्त अवस्था है जहां तमोगुण रज और सत्त्वको अभिभूत करता है. इस अवस्थामें मनुष्यकी प्रवृत्ति अज्ञान, राग, अधर्म आदिमें होती है. यह अवस्था नीच मनुष्योंकी है.
2. **क्षिप्तावस्था :** यह रजोगुणकी प्रधानतायुक्त अवस्था है. तम और सत्त्व गौण होते हैं. इसमे जब गौण तमोगुण गौण सत्त्वगुणको अभिभूत करता है तब अधर्म अज्ञानादि में प्रवृत्ति होती है. यदि सत्त्वगुण तमको अभिभूत करता है तब धर्म ज्ञानादि में प्रवृत्ति होती है. रजोगुणके कारण प्रवृत्तिका सातत्य नही रहता. यह अवस्था साधारण मनुष्योंकी है.
3. **विक्षिप्तावस्था :** यह सत्त्वगुणकी प्रधानतायुक्त अवस्था है. रज और तम गौण होते हैं. इस अवस्थामें मनुष्यकी प्रवृत्ति धर्म ज्ञान वैराग्य में होती है. परन्तु रजोगुण चित्तको विक्षिप्त करता रहता है. यह अवस्था जिज्ञासुओं और उच्च मनुष्यों की है.
4. **एकाग्रावस्था :** जब एक ही विषयमें सदृश वृत्तियोंका प्रवाह चित्तमे; निरन्तर बहता रहे, तब उसको एकाग्रता कहते हैं. यह चित्तकी स्वाभाविक अवस्था है जब वह बाध्य विषयोंके रज तथा तम का प्रभाव न रहे. तब वह स्वच्छ स्वरूपमें है. इसकी अन्तिम स्थिति विवेक ख्याति है उसमें संप्रज्ञातसमाधि होती है.
5. **निरुद्धावस्था :** विवेकख्याति भी चित्तकी एक वृत्ति है. इस वृत्तिके भी निरुद्ध होनेपर निरोधावस्था होती है. उसमें सभी संस्कारोंका तिरोभाव होकर अविद्यादि पांचों क्लेशसहित कर्माशयरूप जन्मादिकोंके बीज नहीं रहते इसलिये इसको असम्प्रज्ञात या निर्बीज समाधि भी कहते हैं. शुद्ध आत्मस्वरूपमें स्थिति होती है.

ग्रन्थसूची

1. ईशाद्यष्टोत्तरशतोपनिषदः चौंखम्बा विद्याभवन वाराणसी.
2. भगवद्गीता गीताप्रेस गोरखपुर,
3. सुबोधिन्यां तृतीयः स्कन्धः श्रीवल्लभाचार्य ट्रस्ट् मांडवी-कच्छ,
4. पातञ्जलयोगदर्शन चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी.

5. सर्वदर्शनसंग्रहः भाण्डारकरप्रच्यविद्यासंशोधनमंदिर इ.स.१९७८
6. अहंकारमीमांसा भाग. १ गो. श्रीश्याममनोहर.
7. Indian philosophy by S.Radhakrishnan Oxford University press 200 6/7